मुर्दा-स्थगित

–महेश कटारे

शहर के अखबार तो पिछले कई दिनों से चिल्ला रहे थे कि जिस दिन हुजूर की पुत्री ससुराल जाएगी, सारा शहर रोयेगा। बात कहने का ढंग कुछ फूहड़ हो गया, अन्यथा रोने को भी अलंकृत किया जा सकता है जो कि अखबार कर रहे थे यथा 'हर आँख नम होगी', प्रेमाश्रु के मोर्मियों की बरसात के बीच डोली उठेगी, 'नगर की जनता', 'आँखों के जल से अर्घ्य देगी' आदि-आदि। सबका सीधा-सा अर्थ यही कि शहर रोयेगा और चूँकि वह शहर का नागरिक है अत: उसे अपना कर्त्तव्य अच्छे ढंग से निभाना है।

कर्त्तव्य पालन में अखबार चौकस था अत: घुमा-फिराकर यह सूचना दे ही देता था कि अमुक दिन आपको रोना है किंतु वह सोचता था कि अभी तो वह दिन दूर है, देख लेंगे। परसों अचानक लेटे-लेटे उसे ख्याल आया कि कल बारात आने वाली है। एक-दो दिन बाद बिदा होगी, वह देखे तो कि विधि पूर्वक हो सकेगा कि नहीं। अँधेरे कमरे में रजाई से ढँका, वह रोने की रिहर्सल करने लगा। कुछ फिल्मों और नाटकों के दृश्य याद कर वह करुणा और संवेदना को आँखों की ओर समेटने लगा। साथ सो रहा बच्चा कुनमुनाया तो उसकी क्रियाशीलता बाधित हुई। हल्का-सा गुस्सा हो आया। ठीक तभी लगा कि बच्चे दो भी ज्यादा हैं। सिर्फ एक ही जिसे पत्नी ही सँभालती रहे। अचानक उसे गुस्से के कारण कोशिश से पैदा की गई करुणा डरकर छिटक गई।

यह तो तय था कि उसे रोना है, देखना यही था कि वह कितने बेहतर और शिष्ट ढंग से रो सकता है। अचानक याद आया कि स्कूल तथा कॉलेज के शुरुआती दिनों में वह शीशे के सामने खड़ा होकर नाटक या भाषण का अभ्यास किया करता था, अभी भी

दाढ़ी छीलते या बात काढ़ते वह अनेक मुद्राओं का अभ्यास दोहरा लेता है। उसने रजाई सरकायी और खड़े होकर शीशे की जगह टटोली। बत्ती जलाने से पत्नी जाग सकती थी। अपने देश में औरत को तो हर जगह हर तरह से रोने की सुविधा है, किंतु वह मर्द है। शीशा हाथ में ले वह पाखाने में जा घुसा था।

कल बारात आ गई थी। अगवानी से लेकर जनवासे तक के रास्ते सज चुके थे। शेष शहर भी सज रहा था।

आजादी के बाद वर्ष समर्पित किए जाने की परंपरा है, पहले ही घोषणा हो जाती है कि अगला वर्ष 'महिला वर्ष' होगा या 'विकलंग वर्ष', चुनाव वर्ष तो ऋतु-चक्र की तरह हर पाँचवें साल आती ही है पर जैसे कि प्रकृति कभी-कभी उत्साहित हो ठेठ जेठ में भी बाढ़ ला देती है या भर पावस में लदे-फदे बादल अधिकारियों की मीटिंग की तरह बिना कोई निर्णय लिए प्रोसीडिंग में अगली मीटिंग की सहमति दर्ज कर घर चले जाते हैं। चुनाव वर्ष भी आगे-पीछे हो लेता है। चालू साल 'सूखा-वर्ष' है। किसान चिंतित है, सरकार चिंतित है, शहर भी चिंतित है।

शहर की चिंताएँ और भी हैं। मसलन 'रामायण' सीरियल के समय विद्युत विभाग की लापरवाही क्रिकेट खेल का प्रसारण होना न होना, सिगरेट, शराब की कीमतों का बढ़ना, बाबरी मस्जिद वग़ैरा।

गाँव एक सूची कार्यक्रम के तहत 'सूखा वर्ष' मना रहा है। पानी धरती के पेट के नीचे धसक गया है, किसान के 'पशु परिवार' को चारा नहीं, वह हाथ चला भी रहा है और जोड़ भी रहा है और भी काम कर रहा है। शहर काम नहीं करता। वहाँ सरकार रहती है सो वही काम करती है। शहर विरोध या समर्थन करता है।

शहर में सूखे का असर नहीं है। बड़े बजारों और बड़ी सड़कों पर तो बिल्कुल नहीं। सूखे की क्या मजाल कि उधर का रुख करे। सूखे की प्रिय बस्तियाँ और गलियाँ यहाँ भी हैं किंतु वे राजमार्गों या मीनाबाजारों से दूर रखी जाती हैं। हर मौसम के अनेक लाभ-हानि हैं। सूखे के मौसम का सबसे बड़ा लाभ यह है कि मेहनत सस्ती हो जाती है।

सरकार के नैतिक और राजनीतिक दायित्व के तहत सूखा पीड़ित शहर की सड़कें और भी चिकनी की गयीं। गाँव से ट्रकों और ट्रालियों में सूखी मिट्टी लाकर शहर की पथरीली जगहों पर बिछा हरियाली रोपी गई। शहर को खूबसूरत बनाना है।

आज तो शहर बेहद खूबसूरत हो उठा है दुल्हन की तरह सजा कहना शहर का

अपमान करना है। दुल्हन तो हर किसी ऐरे-गैरे, नत्थू खैरे की बेटी भी बन जाती है। कहना होगा कि शहर अप्सरा की तरह सजा है। एक बात समझना जरूरी है—गाँव तो मिट्टी है-मिट्टी का सजना क्या और न सजना क्या। कस्बे कभी-कभी सज लेते हैं, शहर तो सजे ही होते हैं, त्यौहार-उत्सव पर वे विशेष रूप से सजते हैं और राजधानी? वह नित नई सजती है, वीरांगना की तरह।

आज शाही सवारी निकलेगी। जनता आकुल-व्याकुल है दर्शन के लिए। तरह-तरह के बैनरों से सजा स्वागत द्वार, हज़ारों हज़ार। हुज़ूर महामहिम हैं। वे अपने लिए कुछ नहीं चाहते। सब कुछ जनता के लिए चाहते हैं। वे लोकप्रिय हैं क्योंकि हर महामहिम लोकप्रिय होता है। उनका हर काम जनता का काम होता है, जनता के लिए होता है। जनता अनुग्रहीत है कि जो काम वह नहीं कर पाती उसे महामहिम कर लेते हैं। यही देखिए कि इस साल सूखे ने अनेक जोड़े बनते-बनते रुकवा दिए। पेट भरें या उत्सव मनाये? हुज़ूर ने सोचा कि उनकी उत्सव-प्रिय प्रजा दुखी और वंचित है, उनकी बेटियों की शादी नहीं हो पा रही तो चलो हम कर लेते हैं। हुज़ूर ने गरिमा और गंभीरता से कार्य-कारण का संबंध जोड़ते हुए अपना मंतव्य ज़ाहिर किया। 'चीखे' जनहित की यह खबर ले उड़े। आसमान गूँज उठा। प्रजा धन्य हो गई।

सड़कों पर बेतहाशा हुजूम उमड़ पड़ा है। जाने कौन-कौन तो आया है इस शादी में। जिनके सिर्फ नाम सुनते थे या नाम तक नहीं सुने वे भी। बड़ों ने थैलियाँ खोल दीं, छोटों ने जेबें टटोली और रोने के लिए राजमार्गों के आस-पास इकट्ठे होने लगे। बचे-खुचे आँसुओं से उन्हें नगर की बेटी को विदा करना है। हुजूर ही नगर हैं। हुजूर सामर्थ्यवान हैं, वे नगर तो क्या देश तक हो सकते हैं।

सारा नगर गौरव के सागर में डुबकी लगा रहा है। बारात लाने वाले भी महामहिम हैं, होने भी चाहिए। गाँवड़ी कहावत में 'लाखों चिट्ठियाँ फाड़ी गई हैं।' ठठ के ठठ देहाती जेब में राजचिन्ह मुद्रित चिट्ठयाँ धरे राजपथ के किनारे खड़े हैं। एक बोला—भाई वाह-क्या छवि है? महात्मा तुलसी कह गये हैं—सम समधी देखे हम आजू-सही है साँप का मुँह साँप ही सूँघ सकता है। वह जेब में रखे निमंत्रण-पत्र को उँगलियों से सहलाने लगता है। कल यह पत्र उसे फ्रेम में जड़वाना है।

शाही सवारी देखने के लिए जन-समुद्र ठाठें मार रहा है। जाने कहाँ-कहाँ से जनम-जनम के भिखमँगे किस्म के लोग अपनी दयनीयता को भरसक छिपाते हुए ठीक-ठाक या फिटफैट आवरण धारण कर जमा है। आतिशबाजी जारी हैं। क्यों कर रहे हैं ये लोग आतिशबाजी? नहीं, ये सिर्फ श्रद्धा नहीं है, उस हवा का भी असर है जो बह

रही है। पड़ जाएँ कहीं हुज़ूर की निगाह में? नाम भी पूछ लिया तो धन्य-धन्य हो जाएँगे। नाम के सहारे कुछ तो जुगाड़ कर ही लेंगे।

पर उसे क्या जुगाड़ करना है? वह तो अपने परिवार का पेट भर ही रहा है। बहुत से लोगों की तुलना में अच्छे तरीके से। उसके लिए तो कोई चिंता भी नहीं, चांस यानी भाग्य। वह थोड़ा-सा ही सही सोचता क्यों है। चांस की फिराक में क्यों नहीं रहता? यह सोचना ही तो चांस को मार देता है।

पत्नी और बच्चों को एक परिचित घर के छज्जे पर लटकाकर वह सड़क पर आया। सड़क के दोनों ओर सिर-ही-सिर, हर दस कदम पर डंडाधारी वर्दी-बीच की सड़क 'पंद्रह फुट' साफ रखने के लिए। दबाव सड़क की ओर बढ़ता तो डंडा पीछे धकेल देता। शाही सवारी आने में अभी काफी देर थी, लालबत्ती वाली गाड़ी थोड़ी-थोड़ी देर बाद बीच की खाली सड़क पर दौड़ते हुए प्रशासन की सतर्क उपस्थिति की याद दिला जाती थी। नगर की जनता धैर्य के साथ बतियाते-गलियाते किनारे जमी थी।

कोई बोला, ''यार बड़ा चुतियापा है। कब से खड़े हैं। अभी तक आ जाना चाहिए था टाइम के हिसाब से।''

''क्यों, क्या तुम्हारे नौकर हैं जो तुम्हारी घड़ी की सुई के साथ चलें? अरे ब्याह-बारात की ठसक का मामला है, फिर राजाओं के रेले ठहरे'', दूसरे ने कहा।

''नहीं मेरा मतलब अखबार में छपे कार्यक्रम से था।''

''ठीक है। अखबर तुम्हारे मतलब से निकलता है?''

''यार! अखबार पढ़ते तो हमीं है ना?''

''माना-पढ़ते हो। पर किसके बारे में पढ़ते हो?''

''मतलब खबरें तो होती ही हैं।''

''कौन साला कहता है कि नहीं होतीं। यही न कि फलाँ साहब को छींक आ गई, ढिमके साहब छुट्टियाँ मनाने किसी खास जगह गए। उन साहब ने गिरफ्तारी दी। वे साहब वाक् आउट कर गए। इन्होंने वक्तव्य दिया, उन्होंने रैली का नेतृत्व किया।''

ऐसे अवसरों पर समय काटने का, चर्चा से अच्छा कोई साधन नहीं होता। यही पता लगता है कि घुग्घू से लगने वाले और साहब के डर से बार-बार पेशाबघर की यात्रा करने वाले व्यक्ति के भी अपने मौलिक विचार होते हैं। यहाँ तक कि उसे कुर्सी पर बिठा दिया जाए तो सरकारें तक मज़े में चल सकती हैं।

'खाली बैठा बनिया सेर बाँट ही तौले वाले' अंदाज में कुछ और लोग भी हल्के-हल्क मुस्कराते चर्चा की ओर आकर्षित हो गए। गुट्ट-सा जमने पर कुछ दूर के तमाशाइयों की छठी इंद्रिया जागी। ''वहाँ क्या हो रहा है?'' वे उस तरफ बढ़े-कुछ और लोग भी बढ़े, ''क्या हुआ भाई?''

''पता नहीं'' एक आदमी जो पंजों पर उचक-उचक कर टोह रहा था 'बोला'। भीड़ का एक हिस्सा उस ओर बढ़ने लगा। दूर-दूर से निगाहें उधर ताकने लगीं। 'ला एंड आर्डर' का खतरा भाँप कर छोटा दरोगा कुछ डंडों के साथ लपका। वह पीछे था-आगे आदमियों की गाँठ थी। डंडों ने थोड़े से चमत्कार का प्रदर्शन किया तो गाँठ ढीली पड़ गई। अपने चूतड़ों को सहलाता वह जैसे-तैसे किनारा पकड़ पाया। नहीं! यहाँ एक जगह खड़े रहना ठीक नहीं। इससे तो अच्छा कि वह सवारी के रास्ते आगे बढ़े। अभिवादन और श्रद्धा स्वीकारते हुए 'हुजूर सवारी' को यहाँ तक पहुँचने में जाने कितनी देर लगेगी? कुछ आगे बढ़ लें तो देखकर वह जल्द घर लौट लेगा। बाजार की रौनक भी दिखाई आएगी। वह बढ़ लिया।

शाही स्वागत में मुख्य मार्ग जगर-मगर हो रहे थे। अनगिनत झालरें बल्ब रीतिकालीन कविता की भाँति चकाचौंध मार रहे थे। विद्युत विभाग पूरी तरह मुस्तैद था कि आपूर्ति में बाधा न आए। जनता की खुशी में खलल न पड़े, अत: सीधे खंभों से बिजली लेने की मौत स्वीकृति थी। गलत सही बिल आने का कोई खतरा नहीं था बिजली जी भर लुट रही थी। यह विवाह बार-बार होना है क्या?

बाँस बल्लियाँ, लोहे के पाइप सड़क की देह पर किए गए छेदों में ठुके अभिनंदन के भार से झुके-झुके पड़ते थे, हजारों बैनर 'स्थाई' थे। जिन्हें कहीं भी... कभी भी, किसी के लिए भी लटका लो। उसी संख्या में नई-से-नई प्रांजल और चिकनी भाषा में दमकते पोस्टर और बैनर फूल-पत्तियों के बीच दाँत निपोरते जान पड़ते थे। कई स्वागत द्वार तो इतने कीमती कि जिनकी लागत में 'बेचारे बापों' की दो-दो लड़कियाँ निपट जाएँ। पेड़ों से नोची-खसोटी हुई हरियाली मार्ग पर बिखेर दी गई थी। ऊँचे भवनों के आस-पास परिंदे चक्कर काट रहे थे। ठूँठ हुए पेड़ों के बीच उनके घर की पहचान खो गई थी।

धक्के खाते, धकियाते और बचते घिसटते हुए वह उल्टी दिशा में सरकता गया। मार्ग पर प्रतीक्षा बिखरी पड़ी थी। जो पिछले कुछ दिनों से ज्यादा ही गहरा गई थी। जन्म, मरण, चोरी, डकैती, बलात्कार दो-तीन दिन से बिल्कुल बंद थे। अखबारों और चर्चाओं में सिर्फ शादी थी। आज तो उत्सुकता का चरम था और सारे शहर में आदमी

के नाम पर सिर्फ हुजूर थे।

वह सुस्ताने के बहाने एक जगह ठहरा। शिष्ट से दिखने वाले तीन-चार लोग कुछ हटकर खड़े थे, भद्रजनोचित दूरी रखकर वह भी खड़ा हो गया। चार समझदार किस्म के लोगों के बीच विचारों का आदान-प्रदान जरूरी होता है। वे भी कर रहे थे। ''क्यों भाई शैवाल जी! नमक तो अब बड़े-बड़े पूँजीपति भी बनाने लगे हैं। हमारे भी टाटा की थैली आती है। पर ससुरा पता नहीं। इस खानदान के नमक में ऐसी, क्या बात थी कि पीढ़ियाँ बीत गयीं फिर भी शहर का आदमी कहेगा कि 'हुजूर का नमक खाया है' जाने किस प्रयोगशाला में बनता था इनका नमक?''

शैवाल जी ठहाका लगाते बोले, ''चचा! नमक बड़ा महिमावान पदार्थ है। वाज़िद अली शाह का नाम सुना है? उसे भी छोड़ो, अपने बापू कोई चूतिये ही थे कि यूँ ही नमक आंदोलन चलाते।'' चचा मुँह फाड़कर शैवाल जी को देखने लगे। बग़ल के सज्जन दाढ़ी के बाल नोचते बोले, ''चाचा! नमक-वमक कुछ नहीं, जनता भी समझदार हो चली है। यह सब कौतूहल प्रियता है। लोग दी ग्रेट जैमिनी सर्कस देखने के मूड में हैं। सुना है कि हिंदुस्तान भर के राजे-रजवाड़ों ने अपनी-अपनी पगड़ियाँ, अँगरखे तहखाने की संदूकों से निकाल धो-पोंछकर पहने हैं। थोड़ी ही देर में सड़क पर आपको अठारहवीं सदी नजर आएगी। लोग अठारहवीं और इक्कीसवीं सदी का 'कांबिनेशन' देखने खड़े हैं।''

''सवाल लोकतंत्र का है।''

''लोकतंत्र! क्या चीज है यह? आदरणीय यह एक शब्द भर है जिसे उछाला जा सकता है, चुभलाया जा सकता है। इसके नाम से तुम अपने विरोधी पर हमला कर सकते हो। ताकत हो तो लतिया भी सकते हो। लोकतंत्र, समाजवाद वगैरा आज के 'अल्लाहो अकबर' और 'हर-हर महादेव' हैं।''

शैवाल जी बहस को भटकती देख मुद्दे पर लाए-''दरअसल इसे लोकप्रियता से जोड़ना ग़लत है। अजूबे को देखने के लिए भीड़ उमड़ती ही है। आप प्रचारित कर दें कि शहर के फलाँ मैदान पर सरे-आम फाँसी लगाई जायेगी। देखिए भीड़। शहर के चूहे तक वहाँ पहुँच जाएँगे या प्रचार हो जाए कि सौ या पचास आदमी नंगे होकर ढोल-नगाड़े बजाते गुजरेंगे। इससे दुगुनी भीड़ देख लेना। दरअसल लोग ढर्रे की ज़िंदगी में कुछ चेंज चाहते हैं, उत्तेजक किस्म का कुछ भी। रोज़-रोज़ का वही गीत है कि हाय महँगाई, हाय भ्रष्टाचार, हाय पतन, बीवी, बच्चे, घर, ऑफिस, अफ़सर, डरना-भभकना।

स्वयं कुछ बदलाव ला नहीं पाते तो कोई और ही ला दे। उनके लिए घंटे-दो-घंटे का तमाशा भी महत्त्वपूर्ण हो गया है।''

इन्हें खंभा नोचता छोड़कर वह बढ़ लिया। मार्ग के दोनों ओर छज्जों, बलकनियों पर महिला वर्ग अपने परंपरागत धैर्य के साथ पूरी राजी-खुशी सहित जगह-जगह डटा हुआ था, लगता था कि ये किसी भी घटना की महीनों इसी तरह प्रतीक्षा कर सकती हैं। वह दृश्यों पर दृष्टि फटकारता जा रहा था कि कंधे पर दबाव पड़ा। क्षण के किसी सौंवें या हजारवें अंश को उसे गुदगुदी पैदा हुई। किसी कोमल हथेली का स्पर्श! दबाव बढ़ा। ''क्यों? हम भी तो खड़े हैं, राहों में'' वह मुड़ा। ''अरे तुम?''

''हाँ कभी-कभार हम पर भी नज़र डाल लिया करो'' ये नागेश जी थे। स्थानीय अबखार के नगर प्रतिनिधि। महत्त्वपूर्ण व्यक्ति थे, कुछ मस्त तबियत के भी। दोस्तों के बीच स्वयं को 'नरक प्रतिनिधि' कहते थे-कड़की के दिनों में कुर्रा कर और गीले समय ब्याज स्तुति से। बोले-''कहो क्या राय है?''

उसने कहा-''अपना क्या? राय तो तुम्हारी मालूम होनी चाहिए? वही महत्त्वपूर्ण है।''

साथ चलते-चलते नागेश जी ने कहा, ''दोस्त? अपनी राय तो कल सबको मालूम हो जाएगी। हाँ, मेरी नहीं, अखबार की अर्थात् मालिक की-सेठ की।''

''सेठ की क्यों। तुम्हारी क्यों नहीं?'' उसने उन्हें घूरा।

''तो सुनो एक किस्सा। निराला पर अखबार में एक अच्छा लेख छपा।''

''हाँ तो?''

''टोको मत-सुनो। दूसरे दिन कुछ समझदार लोगों की प्रशंसा भरी चिट्ठियाँ आयीं, दो-चार फोन भी। अखबार सेठ अक्सर प्रधान या मुख्य संपादक कुछ न कुछ होते ही हैं, सो वे प्रसन्न भए। मदगदायमान होकर उन्होंने अपने लेखक कर्मचारी को तलब किया उससे शाबासी का पहला ही शब्द कहा था कि कहीं से फोन आया-वे सुनते रहे...लगभग पटकने के अंदाज में उन्होंने फोन रखा-''तो ये पाँच कालम का अधपेजी लेख आपने लिखा था?'' सेठजी की प्रसन्नता की सूचना लेखक कर्मचारी को मिल चुकी थी, वह सम्मान में दुहरा हो गया-''जी बाबूजी।''

''और जो रंग श्री मिल के मैनेजर साहब ने क्रिकेट टूर्नामेंट का उद्घाटन किया था, खिलाड़ी भावना पर भाषण दिया था? उनकी फोटो?''

''उस खबर को कभी भी दिया जा सकता है। उस दिन 'निराला जयंती थी।'''

''तो भाई साहब! आप ऐसा करें कि ये 'निराला' कौन हैं उससे दस हजार के विज्ञापन ले आएँ।'' सेठजी ने कहा।

लेखक सिटपिटा गया। सेठजी ही बोले, ''भाई साहब जब आप 'निराला' या जो भी हो, उससे विज्ञापन तक नहीं ला सकते तो हमारा दिवाला निकलवाने पर क्यों तुले हैं? अगर यह तुम्हारा रिश्तेदार हो तो चलो डाल दो इसकी खबर भी। पर भाई साहब इसके लिए पाँच कॉलम और आधा पेज बरबाद करने का हक आपको किसने दिया?''

''समझे श्रीमान्'' नागेश जी ने उसका हाथ झकझोरा-''देश-विदेश के कई पत्रकार इस समय शहर के आतिथ्य का सुख उठा रहे हैं। वर-वधू दोनों पक्ष दाता-खानदान हैं। ये अखबारी कलम का जमने के लिए इस्तेमाल करना चाहते हैं, तो इन्हीं जैसे दूसरे उखाड़ने के लिए। समर्थन और विरोध दोनों के लिखने वाले तय हैं। दोनों ओर से पाँच सितारा सुविधाएँ उपलब्ध कराई गई हैं।''

''तुम्हें भी तो प्रसाद मिल रहा होगा?'' उसने पूछा।

''तुमने वह कहावत नहीं सुनी? गाँव का जोगी जोगना, आन गाँव का सिद्ध।'' बात कुछ और आगे बढ़े कि दोनों के बीच भारी भरकम-सी वर्दी आ गई। नागेश जी को शहर कोतवाल से हाथ मिलाता छोड़ वह तेजी से आगे बढ़ गया।

वी.सी.आर. पर 'रामायण' का रंगीन प्रदर्शन काफी भीड़ को आस-पास समेटे था। कोई सज्जन दुखी हो रहे थे कि यह ससुरा बाज़ी मार ले गया, भीड़ के कारण हुजूर का ध्यान इधर जरूर जाएगा। अपने मंडप पर इससे चौथाई जमाबड़ा भी नहीं। उनके अंतरंग से दिखने वाले ने सलाह दी ''ऐसा करते हैं बॉस। अभी पंद्रह-बीस मिनट का टाइम है, अपन लाकर ब्लू फिल्म चढ़ाए देते हैं, चिड़िया भी 'रामायण' के पास रुक जाए तो नाम बदल देना।'' सलाह पर मुस्कराता वह बढ़ा तो शाही सवारी की धूम थी। अजीब दृश्य था-अभिवादन और अहसान के बोझ से फूलों के साथ बिछी-बिछी जाती प्रजा और प्रजा परायणता को स्वीकारते हुजूर। मोतियों, हीरों जाने किन-किन चमकने वाले पत्थरों की झालरों में लिपटी पगड़ी और पोशाक। आँखों पर सूरज की रोशनी के साथ रंग बदलने वाले काँचों का चश्मा। जुड़े हुए आश्वस्त हाथ। उनकी बगल में भी हुजूर याने पूरी प्रजा के समधी। अगले वाहन में दिव्य दर्शन देते वर-वधू। छायाकारों, फिल्मकारों की गाड़ियों से चकाचौंध उगलते कैमरे, अनगिनत साफे, अँगरखे, तलवारें, कटारें, पानदान, पीकदान और सबसे पीछे हाथ जोड़े नगर का भविष्य यानी

हुज़ूर के उत्तराधिकारी-युवराज। आगे-पीछे, अगल-बगल वर्दी, डंडे और संगीनें।

उसे एक और अनुभव से साक्षात्कार हुआ। वह हतप्रभ था। वह कुछ भी तय नहीं कर पा रहा था। जाने वह चल रहा था या खड़ा था या भीड़ के साथ लुढ़क रहा था।

वह किसी से टकराया–''अंधे हो गए? दिखता नहीं क्या?'' बारीक आवाज... उसे भय ने धर दबोचा-अगर वह चप्पल उतार ले तो? घिघियाते हुए उसने 'सॉरी' कहा और रेला निकल जाने की प्रतीक्षा करने लगा। उसके मफलर को उसाँस से छूती कोई कालेजी तरुणी-अपनी साथिन से 'कमेन्ट' कर रही थी–''सच्चे-ई-ई। इसको कहते हैं शादी। पार्टनर! हो तो ऐसी हो। वरना-हाय?''

''तो चढ़वा दें, तेरा भी नाम दहेज की लिस्ट में। तू भी क्या याद करेगी बोल?''

एक शैतान ख्याल उसके मन में आया कि शहर की जाने कितनी लड़कियाँ और महिलाएँ इन ललुआते और चमकते चेहरों में अपने पति की कल्पना कर रही होंगी। सबके सामने तो ये देवरूप में दर्शन देते हैं। रात-दिन रोटी की तलाश में झुलसा और बुझा घरेलू चेहरा इनके मुकाबले क्या टिक पाएगा? शहर की वर्णसंकरी इच्छा के ख्याल ने उसे बेचैन कर दिया। उसकी पत्नी भी तो इन्हें देखने बैठी है–वह घबराया सा बच्चों को घर ले जाने के लिए लपका।

शाह और शाही दंपत्ति को घूमकर जाना था, इसने सीधी सँकरी और उबड़-खाबड़ गली पकड़ी। शहर के भूगोल से वह परिचित है। ऐसी हजारों अँधेरी गलियाँ हैं जो पीछे बंद है ओर आगे राजमार्ग पर खुलती है। कुछ बीच की सड़कें भी हैं। बीसेक मिनिट में उसने रास्ता काटा होगा कि गली के राजमार्ग वाले मुहाने से लोग बदहवास, हाँफते, पीछे मुड़-मुड़ देखते गली में धँसे चले आ रहे थे जैसे यह उनकी सुरक्षा का किला हो–''क्या हुआ भाई?''

''पता नहीं उधर कुछ है–'' धौंकनी के साथ एक ने इशारा किया।

''वहाँ राजमार्ग पर?''

''हाँ वहीं-वहीं'' भागने वाला अब कुछ इतमीनान में था।

''उधर तो सवारी आ रही है, पुलिस लगी है'' बात पूरी होती कि एक देहरी पर आधे अंदर आधे बाहर नागेश जी दिख गए। वह तेजी से उनके पास पहुँचा। घबराहट तो नागेश जी के चेहरे पर भी थी, किंतु उसे देखते ही खिल गए–''अरे कहाँ जा रहे हो? खोपड़ी खुलवानी है क्या? उधर पुलिस रिहर्सल कर रही है।''

''वजह?''

''वजह है मुर्दा। घबराओ मत, अभी तुम्हारा नंबर नहीं आया। इधर आ जाओ वत्स। तुम्हारी जिज्ञासा शांत करूँ-हाँ ऐसे! अच्छे बच्चे की तरह सुनो! विश्वस्त सूत्रों के अनुसार कल सायं इस अँधेरी गली में किसी जर्जन नाव का इकलौता खेवनहारा मर गया। घर, कोठरी, या दड़बा में एक अदद लाश और रेजगारी की कीमत के तीन-चार अदद बच्चे। मुर्दे की बीबी, बर्तन माँजने का व्यवसाय करती है–वह अपनी साइट पर गई थी। लौटी तब तक सड़कें रोशनी के दूध में स्नान कर चुकी थी। रात में अंत्येष्टि जैसा महँगा समारोह संपन्न करने की कूबत मुर्दे की बीबी में थी नहीं। गाँव में परिवार वालों को भी खबर करनी थी। रात बीती। दिन आया। शाही शादी का मजा छोड़कर गाँव में खबर करने कौन जाता? खैर जाने कैसे खबर हुई–गाँव से दो-तीन सदस्यीय प्रतिनिधि मंडल आया। अर्थी रस्म हुई। तब तक सूर्य भगवान विश्राम करने चले गए। अब भाई साहब! ये जीव कोई राजा या नेता, तो था नहीं कि रसायनों के उपचार द्वारा अंतिम दर्शनों के लिए रखा जाता। जाड़े की अगली रात के चौदह घंटों और ठंडी सुबह के तीन घंटे मिलाकर कल तक लाश बदबू मारने लगती। सो तय पाया गया कि शाही सवारी आने से पहले ही उसे ठिकाने लगा लिया जाए।

अब श्रीमान् को हम वहाँ लिए चलते हैं, जहाँ शाह, हुज़ूर नंबर एक, दो, तीन, चार आदि चल रहे हैं। बिजली विभाग ने आज के खेल के लिए एस्ट्रोटर्फ इंतजाम किया है। लोग जीभर सुट्टे मार रहे हैं। सरकारी प्रेस की बगल में किसी खंभे, दुकान, स्वागत द्वार, राम जाने कहाँ आग लगी कि खतरा भाँपकर प्रशासन ने शाही सवारी बीच की सड़क से मोड़ दी। उधर लोग निराश भले ही हुए हों कि लाखों की लागत से सजे-धजे स्वागत द्वार धरे रह गए, पर पूरे तीन किलोमीटर का चक्कर बच गया। यूँ यहाँ तक आते-आते सवारी को देर लगती पर शार्टकट के कारण वह जल्दी ही आने को है और इधर से मुर्दा घुस पड़ा। जाना तो दोनों को एक ही रास्ते से है। प्रशासन के समक्ष गहन समस्या उपस्थित हो गई है कि पहले मुर्दा जाए या शाही सवारी। और प्यारे भाई! जब प्रशासन का दिमाग काम करना बंद कर देता है तो लाठी काम करने लगती है।''

''तुम्हें पड़ गई क्या?'' उसने पूछा।

''हो भी सकता है–शीघ्र पता नहीं चलता। चोट हमेशा बाद में तकलीफ देती है। अब चलो, मुझे पत्रकारिता भी करनी है।'' नागेश जी उसे खींचने लगे, वे गली के मुहाने पर पहुँचे। उचक-उचक कर देखने से पता चला कि अर्थी बदस्तूर बीच मार्ग पर

पड़ी है। कंधा देने वाले निरीह याचना से पुलिस और भीड़ की ओर बारी-बारी से टुकर-टुकर कर लेते हैं। आठ-नौ वर्ष का एक बालक मुँडे सिर पर सफेद कपड़े का टुकड़ा लपेटे हाथ में धुँधुआती हंडिया लटकाए खड़ा है। ये पाँचों प्रणी और छठा मुर्दा पुलिस के घेरे में हैं। दरोगा, नगर निरीक्षक, डिप्टी सब परेशानी में डूबे दिखाई दे रहे थे। पुलिस के घेरे पर दर्शकों का घेरा था। शाही सवारी की प्रतीक्षा में हो रही कोफ्त छंट गई थी-यह फिल्म के पूर्व, ट्रेलर जैसी व्यवस्था थी। नागेश जी ने थैले से डायरी निकाल हाथ में ली-''जरा हटिए प्लीज? इन्हें निकलने दीजिए। हटो भी, सॉरी'' आदि कहते वे अर्थी तक पहुँच गए। इतने में ही सायरन बजाती लाल बत्ती वाली गाड़ी आकर रुकी- पुलिस कप्तान और डी.एम. उतरे। बजती हुई एड़ियों को अनसुना कर कप्तान ने नगर निरीक्षक को घूरा जैसे जवाब तलब कर रहे हों। अटेंशन की मुद्रा में उसने रिपोर्ट दी, ''सर अर्थी है।''

''किसकी...?''

''कोई आदमी है, कल मरा था।''

''कोई पालिटिकल स्टंट तो नहीं? ऐसा न हो कि वह उठ खड़ा हो...''

''नो सर! सचमुच की लाश है।''

''ओ.के., तुरंत ठिकाने लगाओ। पर देखो वक्त नहीं-लो वे आ गए। कुछ भी करो लाश दिखनी नहीं चाहिए। हरी अप...देखना है क्या कर सकते हो'' वे जीप में बैठ रास्ता साफ करवाने मुड़ लिए।

नगर निरीक्षक की अंतर्दृष्टि के सामने पुलिस पदक लहराया। जयघोष से आसमान गूँजने लगा था। फुलझड़ियाँ, पटाखे, फ्लेश, नगाड़े, चीत्कार, सीत्कार-

शाही दंपत्ति की सवारी गुजर रही थी। मुर्दा बगल की ओर खिसका पुलिस के जवान व्यवस्था में इस तरह सटे खड़े थे कि पीछे की लाश दिखाई न दे सके। जवानों के आगे अर्थी को कंधा देने वाले भी खड़े कर दिए गए। उनके हाथों में फूल थे। सवारी गुजरने लगी-हुजूर के पीछे युवराज...अभिवादन स्वीकारते हुए उनकी निगाह हाथों में पुष्प लिए गुमसुम खड़े छोटे से बालक पर पड़ी...उन्होंने मुस्कराकर हाथ हिलाया..चौंककर लड़के के हाथों ने फूल उछाल दिए।

महेश कटारे

जन्म : 14 जनवरी, 1948

प्रकाशन : समर शेष है, इतिकथा अथकथा, मुर्दास्थगित, पहरूवा, छछिया भर छाछ (कहानी संग्रह) महासमर का साक्षी (नाटक), पहियों पर रात दिन (यात्रा वृतांत)

सम्मान : शमशेर सम्मान, सारिका सर्वभाषा कहानी प्रतियोगिता प्रथम पुरस्कार, मुक्तिबोध पुरस्कार, वागेशरी पुरस्कार, सुभद्रा कुमारी चौहान पुरस्कार, कथाक्रम सम्मान, चक्रधर सम्मान